सजीवों का नामकरण और लीनियस

डॉ. किशोर पंवार

सजीवों के नामकरण की पद्धति का एक इतिहास रहा है। पहले जिस पद्धति का उपयोग किया जाता था उसमें पौधे का नाम उसका लगभग संपूर्ण वर्णन देता था। इसके बाद आधुनिक द्विनाम पद्धति आई जिसके विकास में लीनियस का प्रमुख योगदान रहा है मगर वे इसके जनक नहीं हैं।

जब कोई जीव विज्ञानी अपनी पढ़ाई शुरू करता है तब उसका पाला कुछ इस तरह के नामों से पड़ता है जैसे *मेंगीफेरा इंडिका लिन*, *फायकस रिलीजीओसा लिन*, *कोकोस न्यूसीफेरा लिन*, *केनाबिस सेटाइवा लिन*। दरअसल ये क्रमशः आम, पीपल, नारियल और भांग जैसे चिर-परिचित पौधों के वैज्ञानिक नाम हैं।

इसी तरह *पेवो क्रिस्टेटस लिन*, *गेलस गेलस लिन*, *पिट्टाकुला यूपेट्रिया लिन* भी क्रमशः हमारे राष्ट्रीय पक्षी मोर, जंगली मुर्गा और हीरामन तोता के वैज्ञानिक नाम हैं और इन सबके पीछे लिखा लिन महान वैज्ञानिक लीनियस का शॉर्ट फॉर्म है। दरअसल विज्ञान में यह रिवाज़ है कि जो कोई व्यक्ति सबसे पहले किसी पेड़-पौधे या जंतु का विवरण प्रस्तुत करता है उसके नाम के साथ उस वैज्ञानिक का नाम भी लिखा जाता है। यह लिन वही है जिसे सारी दुनिया कार्ल लीनियस के नाम से जानती है।

लीनियस के सही नाम को लेकर भी कुछ भ्रम हैं। सवाल यह है कि आखिर इस महान दार्शनिक- चिकित्सक- प्रकृति वैज्ञानिक का नाम क्या है? वैसे शेक्सपीयर का तो कहना ही है कि नाम में क्या रखा है। परंतु नाम की महत्ता से इंकार भी तो नही किया जा सकता। उन दिनों जो व्यक्ति अध्ययन के लिए अपने गांव से दूर शहर जाते थे वे अपना नाम कुछ ज़्यादा आकर्षक रख लेते थे। यह नया नाम उस गांव, या फार्म हाउस का लेटिन रूप हो सकता है। यह लगभग वैसा ही है जैसे हमारे यहां नासिककर, खरगोनकर और बुरहानपुरकर जैसे सरनेम रखे जाते हैं।

दरअसल लीनियस के दो चचेरे भाई अध्ययन के लिए जब शहर आए तो उन्होंने अपना नाम टिलिएन्डर रखा। उन्होंने यह नाम उनके खेत में लगे एक विशाल लिन्डेन (लेटिन नाम टिलिया) के पेड़ के नाम पर रखा था। जब लीनियस के पिता धर्मशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने निकले तो उन्होंने भी यही (अपने अंकल का) नाम चुना। स्वीडन में यह लिन्ड, लिन हो गया। जब लीनियस को अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि मिली तब वे कार्ल लीनियस के नाम से कई देशों में जाने जाते थे। परंतु उनके देश स्वीडन में वे अपने सामंती नाम (लीनियस की विज्ञान एवं स्वीडन के प्रति सेवाओं को देखते हुए उन्हें सामंत उपाधि से नवाजा गया था) कार्ल फॉन लिन के नाम से ही जाने जाते हैं।

लीनियस के नाम से जुड़ा लिन्डेन का वह पेड़ आज भी उनके खेत में खड़ा है पर उसकी हालत ठीक नहीं है। पेड़ों से जुड़े नाम की परम्परा हमारे यहां भी चलती है। खजूरिया, अम्बावतिया और बड़ोदिया जैसे उपनाम हमारे देश में भी आम हैं।

द्विनाम पद्धति और लीनियस

द्विनाम पद्धति प्रतिपादित करने का श्रेय लीनियस को दिया जाता है। परंतु यह सच नहीं है। इसका आविष्कार तो लीनियस की पुस्तक स्पीशीज़ प्लेंटेरम के प्रकाशन के 100 वर्ष पूर्व ही केस्पर बाहिन (1560-1634) कर चुके थे। केस्पर बाहिन जोहान बाहिन के भाई थे। दोनों प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री थे। केस्पर ने अपनी पुस्तक पाइनेक्स नाम से 1623 में प्रकाशित की थी। इसमें 6000 प्रजातियों के पर्यायवाची शब्द थे। इसी में उन्होंने वंश और प्रजाति नाम पद्धति के अनुसार पौधों में विभेद किया था। दरअसल लीनियस ने केस्पर की इस द्विनाम पद्धति को अपनाकर प्रसारित और स्थापित करने में उल्लेखनीय

भूमिका निभाई थी।

द्विनाम पद्धति में किसी भी पौधे को दो नाम दिए जाते हैं। पहला शब्द उसके वंश को बताता है और दूसरा उसकी जातिगत विशेषता को। जैसे *फायकस रिलिजिओसा* अर्थात *फायकस* वंश की *रिलिजीओसा* प्रजाति यानी पीपल। और *फायकस बेंगालेंसिस* यानी बरगद। अर्थात पीपल और बरगद एक ही वंश के दो अलग-अलग प्रजाति के पौधे हैं। एक वंश में कई प्रजातियां हो सकती हैं।

कचनार का नाम तो आपने सुना ही होगा। इसी कचनार का वैज्ञानिक नाम इसकी जुड़वां पत्ती को देखकर बाहिन भाइयों की याद में बाहिनिया वंश दिया गया है। हमारे आसपास बाहिनिया वंश के कई पेड़ मिलते हैं जैसे *बाहिनिया रेसीमोसा*, *बा. वेलाई*, *बा. परप्यूरिया*, *बा. वेरीगेटा* आदि।

बहुशब्द से द्विशब्द

केस्पर बाहिन एवं लीनियस के पूर्व पौधे के नामकरण की पद्धति बहुशाब्दिक थी। जैसे *केरियोफिल्लम सेक्साटेलिस फोलिस ग्रेमीनस अम्बेलेटिस कोरिम्बस*। चौंकिये मत यह एक ही पौधे का वैज्ञानिक नाम है जिसका मतलब है चट्टानों पर उगने वाला, घास जैसी पत्तियों वाला, कोरिम्ब प्रकार के पुष्पक्रम वाला पौधा। कल्पना कीजिए वर्तमान में द्विशब्द पद्धति के नामों से लोग घबराते हैं तो ऐसे में इन नामों के साथ क्या होता। बहुशब्द नाम पद्धति में पौधे का लगभग पूरा वर्णन ही आ जाता था। और यदि इससे मिलता- जुलता और कोई नया पौधा खोज लिया जाता तो उसमें एक शब्द और जोड़ दिया जाता था जो उसकी किसी अन्य विशेषता का द्योतक होता था। एक और उदाहरण पेश है *डायएन्थस सिलवेस्ट्रिस अल्टेरा केलिकुला फोलियोलिस फेस्टिजिआर्टस* यानी दूसरा जंगली पिंक जिसकी अंखुड़ियां छोटी, पत्तियां सीधी खड़ी होती हैं।

अठारहवीं सदी के मध्य तक यही पद्धति प्रचलन में रही परंतु इतने लंबे नामों को याद रखना एक समस्या थी। अतः समस्या की गंभीरता को समझते हुए केस्पर बाहिन ने द्विनाम पद्धति शुरू की जिसे लीनियस ने महत्व देते हुए प्रचारित किया और अपनी पुस्तक स्पीशीज़ प्लेंटेरम (1753) में उसी का उपयोग किया। लीनियस का यह कार्य जीव विज्ञान में एक मील का पत्थर साबित हुआ । आज भी जब कोई नया पौधा या जंतु खोजा जाता है तो उसका नामकरण भी इसी पद्धति के अनुसार किया जाता है। जंतुओं की द्विनाम पद्धति सिस्टेमा नेचुरे (1958) में प्रकाशित हुई जिसमें जंतुओं के लिए द्विनाम पद्धति को पहली बार प्रमुखता से उपयोग में लाया गया था।

(स्रोत विशेष फीचर्स)

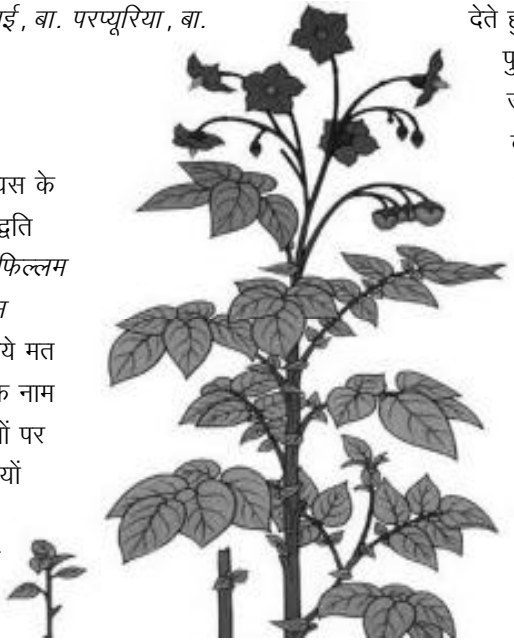

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक 150 रुपए द्वैवार्षिक 275 रुपए त्रैवार्षिक 400 रुपए